International Journal of Applied Research 2016; 2(1): 526-527

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(1): 526-527
www.allresearchjournal.com
Received: 27-11-2015
Accepted: 31-12-2015

बिरमती
Department of Hindi,
Distance Learning,
Kurukshetra University,
Kurukshetra, Haryana, India

Correspondence
बिरमती
Department of Hindi,
Distance Learning,
Kurukshetra University,
Kurukshetra, Haryana, India

तुलसी के काव्य में सामाजिकता

बिरमती

सारांश
साहित्य समाज का प्रतिबिंब है उसका आईना है यह बात प्राचीन काल से ही सत्य सिद्ध होती आई है। आधुनिक काल भी इसका अपवाद नहीं है। इसी परिप्रेक्ष्य में हम तुलसी के साहित्य में स्पष्टतः देखते हैं। हालाँकि तुलसी के साहित्य में विद्यमान सामाजिकता का आंकलन करते समय हम तुलसी के व्यक्तित्व की झलक भी उसमें देखते हैं ।

कूट शब्द: परिप्रक्ष्य अतिक्रण, समन्वयवादी, मर्यादा मार्गदर्शक

प्रस्तावना

श्रवीद तुलसी भारतीय संस्कृति के एक ज्वलन्त प्रतीक हैं, वे कलिकाल के सबसे बड़े व्यक्ति हैं । तुलसी ने जिस समाज को देखा था बड़ा ही अजीब सा था । तुलसी के ग्रंथों से इस बात का स्पष्ट आभास मिल जाता है कि उस समय का समाज ऊँचे आदर्श पर नहीं चल रहा था। उच्च स्तर के लोक विलसिता में चूर थे और निचले स्तर के लोक अशिक्षित थे । जाति–पाति की प्रथा अधिकाधिक कठोर होती जा रही थी । सामाजिक मर्यादाओं का खुलकर अतिक्रमण हो रहा था । तुलसी के समय का समाज नैतिक, धर्मिक, सांस्कृतिक और आर्थिक दृष्टि से ह्रासोन्मुख था । प्रबुद्धचेत्ता स्वतंत्र कलाकार जनता के प्रतिनिधि कवि तुलसी के सम्मुख एक महान कार्य था जिसे कि उन्हें अत्यंत कौशल और कलात्मकता से सम्पन्न करना था । एक समन्वयवादी लोकनायक में समझौते की जो प्रवृति होती है वह उनमें थी। गोस्वामी तुलसीदास के सम्बन्ध एक समन्वयवादी लोकनायक में समझौते की जो प्रवृति होती है वह उनमें थी। गोस्वामी तुलसीदास के सम्बन्ध में आचार्य शुक्ल का यह कथन अक्षरशः सत्य है भारतीय जनता का प्रतिनिधि कवि यदि किसी को कह सकते हैं तो इसी (तुलसी) महानुभव को ही । इसमें व्यक्तिगत साधना के साथ लोक धर्म का अत्यन्त उज्वल छटा वर्तमान है।'' कविता उनका साधन है –साध्य है राम भक्ति । किन्तु अपने साध्य तक पहुंचने के लिए गौस्वामी जी ने जिस साधन को स्वीकार किया उसे इतना पूर्ण और समर्थ बना दिया, उस वैयक्तिक साधना में इतनी मात्रा में जनमानस हो गया । उनका साहित्य स्वान्तः सुखाय होते हुए भी सर्वहिताय सिद्ध हुआ। उनके अन्तः संघर्ष और उनकी भक्ति में लोक संग्रह सन्निहित है। भक्ति और साहित्य दोनों क्षेत्रों में उन्हें जितनी सफलता मिली है उतनी अन्य किसी कवि को नहीं मिली । उनकी कविता में मानव जीवन की अधिक से अधिक दशाओं का सन्निवेश हुआ है। उन्होंने स्वान्तः सुखाय साहित्य की सृष्टि की पर वह सर्वसुखाय सिद्ध हुई । उनका कविता सम्बन्धी दृष्टिकोण अत्यन्त व्यापक और उदात्त है–

कीन्हें प्राकृति जनगुणगाना, सिर धुनि गिरा लागि पछिताना ।
अथवा
की रति भनिति भूति भलि सोई, सुरसरि सम सब कहं हित होई ।।

उनकी वाणी एक ओर तो व्यक्तिगत रमधना के मार्ग में विरहपूर्ण शुद्ध भक्ति ओर लोक पक्ष में आकर पारिवारिक और सामाजिक कर्त्तव्य का सौन्दर्य दिखाकर मुग्ध करती है वे कोरे भक्त नहीं हैं और न ही उनके रामचरित मानस को कोरी भक्ति का ग्रंथ कहा जा सकता है । उसमें लोक संग्रह की भावना अत्यन्त उभरी हुई उनकी भक्ति में एकान्तिक साधना नहीं है बल्कि उसमें अन्तः संघर्ष छिपा हुआ है। गोस्वामी तुलसीदास ने काम, क्रोद्ध लोभ, मद और मोह को मनुष्य का प्रबल शत्रु बताया है किन्तु इनका मर्यादित रूप जन–जीवन के लिए अतिशयता अवांछनीय एवं त्यात्य है। रामचरितमानस में रावण और शूर्पणखा ने काम की मर्यादा का अतिक्रमण किया है किन्तु तुलसी ने उन्हें उचित दण्ड भी दिलवाया । नारद को अपने ब्रहाचार्य पर घमंड हो गया और उन्होंने काम का परित्याग कर दिया किन्तु वही नारद काम के फेरे में ऐसे पड़ते हैं कि जग हँसाई होती है । इसके विपरीत राम में काम का मर्यादित रूप है, अतः उसे किसी प्रकार की उलझन का सामना करना नहीं पड़ता । तुलसी ने रावण और परशुराम में मद की अतिशयता दिखाई है ।

उन्हें इतना गर्व हो गया कि यथार्थ का ज्ञान तक न रहा । इसके विपरीत राम को भी अपनी वीरता पर गर्व है लेकिन वह अपनी सीमा से नहीं लांघता । राम नम्रता किंतु दृढ़ता के साथ परशुराम को चेतावनी देते हैं। परशुराम में क्रोद्ध को उचित ठहराया है। क्योंकि राम ने कोप या क्रोध की मर्यादा बांधी । राम आदर्श पुत्र, आदर्श पत्नी हैं, कौशल्या आदर्श माता हैं, लक्ष्मण और भरत आदर्श भाई हैं, हनुमान आदर्श सेवक हैं और सुग्रीव आदर्श सखा हैं । राम मर्यादा पुरूशोत्तम हैं। मर्यादा और आदर्श की प्रतिष्ठा ही उनके जीवन का एकमात्र उद्देश्य है । उन्होंने विपत्तिस में विचलित होना सीखा ही नहीं । आचार्य शुक्ल इस संबंध में लिखते हैं तुलसी के मानस में जो शील–शक्ति सौन्दर्यमयी स्वच्छ धारा निकलती है, उसने जीवन की प्रत्येक स्थिति में पहुंचकर भगवान के स्वरूप का प्रतिबिम्ब झलका दिया है। रामचरित के इसी जीवन व्यापकता ने उनकी वाणी को राजा रंक, धनी–दरिद्र, मूर्ख–पंडित सबके हृदय और कंठ में सब दिन के लिए बसा दिया है। किसी श्रेणी का हिन्दू हो वह अपने जीवन में राम को पाता है । सम्पत्ति में विपत्ति में, रण–क्षेत्र में, आनन्दोत्सव में जहां देखिए वहां राम । .....उनकी वाणी की प्रेरणा से आज हिन्दू जनता अवसर के अनुकूल सौन्दर्य पर मुग्ध होती है, महत्त्व पर श्रद्धा करती है शील की ओर प्रवृत्त होती है सन्मार्ग पर पैर रखती है, विपत्ति में धैर्य धरती है, कठिन कर्म में उत्साहित होती है, दया से आर्द्र होती है, बुराई पर ग्लानि करती है, शिष्टता पर करती है, मानव जीवन के महत्त्व का अवलम्बन करती है । उसी प्रकार तुलसी अपने राम के समान जनता के जीवन में धुल–मिल गये हैं।

राममत्व की रावणत्व पर विजय की जो कल्पना इन्होंने की है, उनके मूल में तत्कालीन भारत की राजनीतिक दुरवस्था थी, जिससे दुखित होकर उन्होंने प्रच्छन्न रूप से रामवत् संघर्ष कर्म का संकेत किया है। एक युग–प्रवर्तक कवि के लिए

ऐसा करना आवश्यक भी था । उनकी रामत्व की रावणत्व आवश्यता भी था। उनकी रामत्व की रावणत्व पर विजय की कल्पना केवल भारतीय समाज के लिए ही नहीं प्रत्युत विश्व समाज के लिए पथ–प्रदर्शिका है । यह वह आलोक है जो गांधी जी का पथ प्रशस्त करता रहा। तुलसीदास कोरे वैरागी बाबा नहीं विरक्त होकर भी आसक्त हैं, वे भारत के ऋणी हैं, वे अपने समाज के मुख, वाणी और मस्तिष्क हैं । तुलसी साहित्य में तत्कालीन भारतीय समाज मुखरित हो उठा है । कृष्ण भक्त कवियों के समान उनकी मथुरा तीन लोक से न्यारी नहीं है और न ही इन्होंने समाज के प्रति अपती खांखे बंद की हुई हैं। इनके साहित्य में तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक घात–प्रतिघात सजीव हो उठे हैं । राष्ट्र और व्यक्तिगत जीवन का आदर्शों का खजाना है । उनकी धारणा थी कि व्यक्ति से परिवार, परिवार से समाज तथा समाज से राष्ट्र का निर्माण संभव है । कदाचित् यही कारण है कि उन्होंने वर्णाश्रम–धर्म व्यवस्था पर अत्यधिक बल दिया है क्योंकि इसने समाज में उच्छृंखलता एवं विश्रृखलता के स्थान पर मर्यादा और एकता की प्रतिष्ठा होती है । किसी आलोक विद्वान के तुलसीदास के प्रति कहे गये शब्द अत्यन्त भावपूर्ण है – तुलसी कवि थे, भक्त थे, पंडित थे, सुधारक थे, लोकनायक थे, और भविष्य के स्रष्टा थे । इन रूपों में इनका कोई भी रूप घटकर नहीं था । यही कारण था कि उन्होंने सब ओर से समता की रक्षा करते हुए एक अद्वितीय काव्य सृष्टि की जो अब तक उत्तर भारत का मार्गदर्शक की जो उब तक उत्तर भारत का मार्गदर्शक रहा और उस दिन भी रहेगा, जिस दिन नवीन भारत का जन्म हो गया होगा। तुलसी के काव्य ने जिस रूप और जिस मात्रा में जन–मन–वाहन की सवारी की है शायद ही हिन्दी के किसी अन्य कवि के काव्य को यह सौभाग्य प्राप्त हुआ हो । इन्होंने धर्म और संस्कृति, समाज और साजित्य सभी क्षेत्रों में भारतीय जनता का सफल नेतृत्व किया है ।

संदर्भ ग्रन्थ

1. हिन्दी काव्य में सामाजिक चेतना का विकास–के शर्मा
2. आलोचना की सामाजिकता – पृष्ठ 51
3. समाज चेतना : महत्व एवं मानदंड – पृष्ठ 210
4. रीतिकालीन भारतीय समाज पृष्ठ 10 शशी प्रभा प्रसाद
5. भाषा और समाज –पृष्ठ 390 रामविलास शर्मा